International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 04-06-2025, Accepted: 04-07-2025, Published: 19-07-2025
Volume 11, Issue 3, 2025, Page No. 19-21

हिंदी उपन्यास लेखन परम्परा और किसान जीवन

रघुवीर दान चारण [1], डॉ. अखिलेश कुमार शर्मा [2]
[1] शोधार्थी, हिंदी विभाग, मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजोल, मिज़ोरम, भारत
[2] सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजोल, मिज़ोरम, भारत

सारांश
हिंदी उपन्यास परम्परा में प्रेमचन्द से पूर्व छिटपुट रूप से किसान जीवन का उल्लेख मिलता है; परन्तु किसान जीवन के सम्पूर्ण ताने–बाने को लेकर उपन्यास लेखन की शुरुआत प्रेमचंद करते हैं। इसके उपरान्त भारत के स्वाधीन होने के साथ ही किसानों को भी अपनी उन्नति का पथ नज़र आने लगा; लेकिन जब धरातल पर यथार्थ से सामना हुआ तो स्थिति कुछ और ही थी। जो पहले जमींदार थे, अब वे सत्ता में हैं। किसान की यह दयनीय स्थिति उदारीकरण के बाद और अधिक विकराल हो गई। आधुनिकता के इस दौर में जहाँ एक ओर किसान औद्योगीकरण एवं बाजारवाद के चरमोत्कर्ष के बीच अपनी प्रतिष्ठा को स्थापित करने हेतु संघर्षरत है। वहीं दूसरी ओर सरकारी भ्रष्ट तंत्र, पूँजीवाद और बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने मिलकर एक ऐसे भंवरजाल का निर्माण किया है जिसमें किसान को स्वयं अपनी जीवन लीला समाप्त करने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग दिखाई नहीं देता। हिंदी उपन्यास परम्परा में किसान की प्रतिष्ठा के इस संघर्ष में उसके पूरे परिवार को जूझते हुए स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

मूल शब्दः जमींदार, भूमि अधिग्रहण, भारतीय परम्परा, ग्रामीण संस्कृति, औद्योगीकरण, शोषण, अधिकार, संघर्ष, विस्थापन, प्राकृतिक आपदा, भूमंडलीकरण, पूँजीवाद, बाजारवाद

मूल आलेख

मानव सभ्यता की सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परम्परा की सटीक छवियाँ को अभिव्यक्त करने का सबसे सशक्त माध्यम साहित्य की उपन्यास विधा है। उपन्यास विधा का केनवास बड़ा होता है। जिसमें किसान जीवन से जुड़े सभी पलों को अभिव्यक्त करने में आसानी होती है। इन्हीं पलों को हिंदी साहित्य की उपन्यास परम्परा के विभिन्न कालखंडों में उल्लेखित किया गया है –

प्रेमचंदपूर्व हिंदी उपन्यास परम्परा में किसान जीवनः इस दौर के लेखक अपनी रुचि के आधार पर उपन्यास लेखन कर रहे थे। इनके पास न कोई पूर्व की परम्परा थी, न कोई निश्चित प्रणाली। इस समय के लेखकों में सिर्फ एक समानता थी। ये सभी खड़ी बोली में लेखन कर रहे थे। इन उपन्यासों में किसान जीवन का छिटपुट वर्णन मिलता है।

किशोरी लाल गोस्वामी के उपन्यास 'अंगूठी का नगीना' में जमींदारों की जीवन शैली का वर्णन है। इसके साथ ही जमींदारों द्वारा लगान वसूलने का भी जिक्र मिलता है। इनके बाद लज्जा राम मेहता ने 'हिन्दू गृहस्थ' में किसान जीवन में कर्ज की समस्या को उजागर किया है। इनके अतिरिक्त बालकृष्ण गुप्त के 'गुप्त बेरी' और भुवनेश्वर प्रसाद के 'बलवंत भूमिहार' में भी किसान जीवन का उल्लेख मिलता है।

प्रेमचंदयुगीन हिंदी उपन्यास परम्परा में किसान जीवन : हिंदी उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचंद ने सामाजिक यथार्थ के विषयों को उपन्यास लेखन का मुख्य आधार बनाया। इससे परवर्ती उपन्यासकारों को विचार–चेतना का एक प्रकाश पुंज मिला। प्रेमचंद की इसी परम्परा का मूल्यांकन करते हुए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि "प्रेमचंद शताब्दियों से पददलित, अपमानित और उपेक्षित कृषकों की आवाज थे।"[1]

प्रेमचंद भारतीय समाज की समस्याओं में सुधार की आकांक्षा रखते है; लेकिन समाज के अन्य वर्गों की तुलना में किसान जीवन का चित्रण प्रेमचंद ने अधिक किया है। इस सम्बन्ध में डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा कि "हर कोई जानता है कि प्रेमचंद ने समाज के सभी वर्गों की अपेक्षा किसानों के चित्रण में सबसे अधिक सफलता पाई है। वे हर तरह से किसानों को पहचानते थे, उनके विभिन्न आर्थिक स्तर, उनकी विभिन्न विचार–धाराएँ, उनकी विभिन्न सामाजिक समस्याएँ– वे किसान जीवन के हर कोने से परिचित थे।"[2]

किसान जीवन पर लिखा गया प्रथम हिंदी उपन्यास 'प्रेमाश्रम' है। इसमें तात्कालिक समय के जमींदार और किसान के मध्य के संबंध को दर्शाया गया है। यह संबंध एक पीढ़ी का न होकर पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाला है। प्रेमचंद इस उपन्यास में तीन पीढ़ी के जमींदारों और उनके व्यवहार परिवर्तन का चित्रण करते हैं। इस उपन्यास में एक ओर जमींदार है जिसके साथ पुलिस, पटवारी और पूरा भ्रष्ट सरकारी तंत्र है तो दूसरी ओर इस शोषण और बेगार के विरुद्ध डटकर खड़े किसान हैं। इसके सम्बन्ध में नामवर सिंह लिखते हैं कि "प्रेमाश्रम में मनोहर, बलराज, क़ादिर जैसे ग़रीब किसान चरित्र नई चेतना के साथ पहली बार भारतीय साहित्य में उदित होते हैं। श्प्रेमाश्रमश बेगार के खिलाफ़ अवध के किसानों के सक्रिय विरोध की पहली आवाज़ है, जिसमें आगे चलकर लगानबन्दी का भी नारा बुलन्द किया जाता है।"[3]

प्रेमचंद ने भूमि अधिग्रहण की समस्या को लेकर 'रंगभूमि' उपन्यास लिखा। जहाँ मुख्य पात्र सूरदास के वही ग्रामीण संस्कार है जो ज़मीन को लेकर एक किसान के होते हैं। जिसका मानना है कि धरती माँ होती है और माँ बेचीं नहीं जाती। प्रेमचन्द का सूरदास केवल एक सामान्य कथा चरित्र नहीं; बल्कि उन सभी किसानों का प्रतीक था जो भूखे रह सकते हैं, जमींदारों के अत्याचार सह सकते है; लेकिन अपनी ज़मीन को नहीं बेचते। दूसरी तरफ है जानसेवक। जो पूँजीवादी सोच का प्रतीक है जिसका एक मात्र उद्देश्य लाभ कमाना है। इसके सम्बन्ध में रामविलास शर्मा कहते हैं कि "इस तरह अंग्रेजी राज किसानों की ज़मीन उन्ही के खून से तर करके अपने वफ़ादार दोस्त जॉन सेवक को भेंट करता है।"[4] इस पूँजीवाद का एक स्वरूप स्वदेशी भी है जो जमींदार और सामंत के रूप में है और जॉन के साथ खड़े हैं।

प्रेमचंद ने 'कर्मभूमि' उपन्यास में तात्कालिक समय की सामाजिक समस्याओं का वर्णन किया है। कर्मभूमि उपन्यास का प्रमुख पात्र

अमरकांत किसानों पर जमींदारों के शोषण के विरुद्ध आन्दोलन करता है और जेल भी जाता है। इस उपन्यास की प्रमुख विशेषता यह रही कि प्रेमचंद ने पहली बार मजदूर, किसान और विद्यार्थियों को एक साथ आन्दोलन करते हुए दिखाया है। इसी का वर्णन करते हुए रामविलास शर्मा लिखते हैं कि "इसके बाद भी नौजवानों ने अनेक बार मजदूरों व किसानों के साथ मिलकर अंग्रेजों का मुकाबला किया था। प्रेमचंद ने राष्ट्रीय आन्दोलन की एक महत्वपूर्ण कड़ी को पकड़ा था और उसका यहाँ चित्रमय वर्णन किया है।"[5]

प्रेमचंद का किसान जीवन को लेकर लिखा गया सबसे महत्वपूर्ण उपन्यास गोदान है। जहाँ एक गाय पालने की इच्छा ने होरी के जीवन में भूचाल ला दिया। इस छोटी सी इच्छा ने होरी से बैल, ज़मीन और किसानी तीनों छीन ली और अंत में जीवन भी। गोदान के रचनाकाल से पूर्व जमींदारों और अंग्रजों के विरुद्ध किसानों के द्वारा अनेक आन्दोलन किए जा चुके थे। जमींदारों को भी यह लगने लगा था कि अब पहले की तरह किसानों का शोषण नहीं किया जा सकता। अतरू उन्होंने इस बार भावनात्मक रूप से होरी जैसे किसानों को बहलाना शुरू किया। जहाँ पर रायसाहब खुद को दयालु और मजबूर दिखाने का प्रयास करते हैं। इसी का वर्णन करते हुए रामविलास शर्मा लिखते हैं कि "गोदान में किसानों के शोषण का दूसरा ही रूप है। यहाँ सीधे–सीधे रायसाहब के कारिन्दें होरी का घर लूटने नहीं पहुँचते। लेकिन उसका घर जरुर लूट जाता है।"[6]

प्रेमचंद के समकालीन उपन्यासकार शिवपूजन सहाय ने अपने उपन्यास 'देहाती दुनिया', जयशंकर प्रसाद ने 'तितली' तथा सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने 'अलका' उपन्यास में किसान जीवन का उल्लेख किया हैं

प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यास परम्परा में किसान जीवन : प्रेमचंद के बाद भी हिंदी उपन्यासकारों ने किसान और ग्रामीण संस्कृति को आधार बनाकर लेखन कार्य जारी रखा। प्रेमचंद के गुजर जाने के एक दशक बाद ही भारत स्वाधीन हो गया। परम्परागत खेती धीरे– धीरे खत्म हो रही थी। गाँव में जातिगत भेदभाव ज्यों का त्यों बना हुआ था। प्रेमचंद के बाद नागार्जुन एवं फणीश्वर नाथ रेणु ने किसान और गाँव की इसी समस्या उपन्यास लेखन का केंद्र बनाया। नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची' में जमींदारों द्वारा किसानों पर अत्याचार को दिखाया है। जहाँ किसान को कृषि भूमि के लिए भी बेग़ार करनी पड़ती है। इस उपन्यास में किसान के मजदूर बनने की स्थिति एवं किसानों का विरोध प्रदर्शन दिखाई पड़ता है।

नागार्जुन ने 'बलचनमा' उपन्यास में एक ऐसे परिवार का चित्रण किया है जहाँ सभी सदस्य मजदूर हैं। "बलचनमा की कथा वहाँ से शुरू होती है जहाँ गोदान समाप्त होता है, यानी मजदूर से। बलचनमा ने होश भी नहीं सँभाला था कि जमींदार का मजदूर होने के लिए बाध्य होना पड़ा।"[7]

फणीश्वर नाथ रेणु के प्रसिद्ध उपन्यास 'मैला आँचल' में गाँव के जातिगत भेदभाव, आर्थिक विषमता एवं किसानों पर जमींदारों के शोषण का यथार्थ चित्रण है। जहाँ समाज का प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी वर्ग का हिस्सा बन गया है। "मेरीगंज की सारी धरती दो–तीन आदमियों के अधिकार में है। शेष ग्रामीण या तो खेतिहर मजदूर हैं या बटाईदारी पर खेती करते हैं।"[8] जिससे उच्च वर्ग और निम्न वर्ग तथा किसान वर्ग और जमींदारों के बीच संघर्ष की स्थिति दिखाई देती है।

रेणु के दूसरे उपन्यास 'परती परिकथा' के नायक जितेन्द्र कोसी नदी घाटी परियोजना के माध्यम से गाँव की हजारों एकड़ की परती भूमि को कृषि योग्य बनाने का प्रयास करता है। इस संबंध में बच्चन सिंह लिखते हैं कि "परानपुर गाँव की हजारों एकड़ बंध्या धरती को उपजाऊ बनाने की मुख्य कथा के साथ गीता मिश्र के डायरीवृत्त को मिलाकर दो पीढ़ियों के अंतराल को रचनात्मक धरातल पर चित्रित किया गया है।"[9] यह उपन्यास एक ओर जितेन्द्र के किसान जीवन को उन्नत बनाने के सपने को प्रकट करता है तो दूसरी ओर गाँव के ही लोगों की पिछड़ी मानसिकता का वर्णन करता है।

किसान जीवन को लेकर शिवप्रसाद सिंह ने 'गली आगे मुड़ती है' उपन्यास लिखा। इसमें नई पीढ़ी के किसान पुत्र का किसानी से अलगाव का वर्णन किया गया है। इस अलगाव का कारण है– नई पीढ़ी को किसानी में अपना भविष्य नज़र नहीं आता। "आज भी गाँवों से विपिन्न का निर्वासन जारी है। आज गाँव देखने में शानदार हैं पर समझने में उतने ही दयनीय।"[10] इस पीढ़ी ने अपने पिता और दादा को खेती करते हुए देखकर यह अनुभव कर लिया की कृषि घाटे का सौदा है।

जगदीश चन्द्र ने अपने लगभग सभी उपन्यासों की कथावस्तु किसान और ग्रामीण जीवन के इर्द–गिर्द बुनी है। इनके उपन्यास 'मुट्ठीभर कांकर' और 'घास गोदाम' दिल्ली के आस–पास के किसानों के विस्थापन को लेकर लिखे गए हैं।

बीसवीं सदी के अंतिम दौर में वीरेन्द्र जैन ने 'डूब' उपन्यास लिखा। इस उपन्यास में बाँध के निर्माण के नाम पर किसानों के भूमि अधिग्रहण को केंद्र में रखा गया है। अरुण प्रकाश के अनुसार "कुछ साहूकार इस ताक में थे कि लोग गाँव छोड़कर भागें तो सस्ती ज़मीन खरीदकर सरकार से ऊँचा मुआवजा लें।"[11] इस उपन्यास में किसानों की भूमि एवं रोजगार की संभावनाओं पर साहूकारों की गिद्ध दृष्टि का चित्रण किया गया है।

इसी समय में कमलकांत त्रिपाठी ने 'बेदख़ल' उपन्यास लिखा। यह उपन्यास 1857 की क्रांति और बाबा रामचंद्र के योगदान को आधार बनाकर लिखा गया। इस उपन्यास में तात्कालिक समय के किसानों की समस्या तथा अंग्रेजों के किसान विरोधी कानूनों पर प्रकाश डाला गया है।

इक्कीसवीं सदी की हिंदी उपन्यास परम्परा में किसान जीवन : उदारीकरण के बाद से औद्योगीकरण को बढ़ावा मिला। बड़ी–बड़ी कम्पनियाँ व्यापार के उद्देश्य से स्थापित की गई। किसान के मन में भी एक आस जगी। यह आस फ़सल के अच्छे रूपये मिलने की, उत्पादन के बढ़ने की, बिचोलियों से छुटकारा पाने की एवं मुद्दतों के बाद बिना कर्ज के एक सामान्य जीवन जीने की थी। किसानों ने जो आस उदारीकरण से लगाई, वह फिर टूट गई, वरन टूट–टूटकर चकनाचूर हो गई। क्योंकि किसान को पूर्ण रूप से कम्पनियों पर आश्रित होना पड गया।

इक्कीसवीं सदी प्रथम दशक में ही भीमसेन त्यागी ने 'ज़मीन' उपन्यास लिखा। "भीमसेन त्यागी ने आज़ादी को आते हुए और उसके बाद के संक्रमणकालीन जिस भारतीय समाज की आशा–आकांक्षाओं, स्वप्नों, को बनते बिगड़ते, ध्वस्त होते देखा है, उसका रसपूर्ण चित्रण 'ज़मीन' में प्रस्तुत किया है।"[12] त्यागी जी ने इस उपन्यास का आधार स्वतंत्रता के बाद हुए जमींदारी उन्मूलन तथा भूदान आन्दोलन को बनाया।

पहाड़ी किसान जीवन को ही आधार बनाकर एस.आर. हरनोट ने 'हिडिम्ब' उपन्यास लिखा। जिसमें शावणु एक छोटा किसान है और उसकी ज़मीन पर एक मंत्री की गिद्ध दृष्टि के पड़ने से शावणु के जीवन में आने वाली उथल–फुथल का वर्णन किया गया है। शावणु मंत्री से कहता है कि "माई बाप! यह जमीन तो मेरे पुरखों की है। मेरी माँ है। मैं अपनी माय को केसे बेच सकता हूँ। मेरे को नी बेचनी है।"[13] इसके बाद मंत्री के आत्याचार शावणु पर शुरू हो जाते हैं।

राजू शर्मा द्वारा लिखे गए उपन्यास 'हलफनामें' में जहाँ एक तरफ जीवन के अभावों में आत्महत्या करने वाला किसान स्वामीराम है तो दूसरी तरफ मुआवज़े के लिए हलफनामें लगाता उसका पुत्र मकई राम। सरकारी कार्यालयों के नग्न यथार्थ का चित्रण करता

मकईराम का यह कथन "अब इन्हे दसवाँ, ग्यारवाँ हलफनामा चाहिए... एक, दो...नौ से इनका पेट नहीं भरा, इन्हें और खुराक चाहिए, राक्षस की तरह रोज एक आदमी का माँस....शपथ की आड़ में इनको धन चाहिए।"[14]

किसान जीवन के सामाजिक और आर्थिक यथार्थ का वर्णन हमें शिवमूर्ति द्वारा लिखित 'आख़िरी छलांग' उपन्यास में मिलता है। इस उपन्यास का नायक पहलवान पहले कर्ज लेने के लिए घूमता है और फिर कर्ज के भँवर में। किसान जीवन की त्रासदी का चित्रण पहलवान का यह अनुभव करता है कि "किसान के घर में जन्म लेकर न पहले कोई सुखी रहा है न आगे कोई रहेगा।"[15]

सुनील चतुर्वेदी का उपन्यास कालीचाट में गाँव की धरती के अंदर एक कालीचाट होने से गाँव में पानी की समस्या निरंतर बनी रहती है। "युनुस सूखे कुए की तली को देखते हुए सोच रहा था। किसान की तो पूरी ज़िन्दगी कालीचाट जैसी ही है। अंधियारी और कड़क।"[16] किसानों पर हो रहे कई स्तरों के आत्याचार का वर्णन भी 'कालीचाट' उपन्यास में मिलता है।

'अकाल में उत्सवश उपन्यास में पंकज सुबीर ने इसमें दो वर्गों का वर्णन किया है– पहला किसान और दूसरा प्रशासन। किसान फ़सल के पकने के समय हुई बारिश के कारण सजल आँखों से सरकारी मुआवजे की राह देख रहा है। क्योंकि इसी की आस में किसान कर्ज लेता है। "भविष्य में फ़सल से चुका देने की उम्मीद पर कर्ज लिया जाता, बाद में पता चलता है कि फ़सल पर कोई प्राक्रतिक आपदा आ गई..कर्ज तो कर्ज था, कब तक देखता, अंततः वह जमीनों को हड़प कर अपना पेट भरता।"[17] वहीँ प्रशासन के लिए यह आपदा में अवसर है। इसका परिणाम यह हुआ की मुआवजे के लिए रिश्वत देनी है और रिश्वत के लिए किसान कर्ज ले रहा है।

'तेरा कोई संगी नहीं' उपन्यास में मिथिलेश्वर ने किसानों की दो पीढ़ियों का वर्णन किया है। आधुनिक पीढ़ी किसानी को घाटे का सौदा मानती है। वे अपने पिता बलेसर को समझाते है कि "अब किसी भी दृष्टि से खेती से जुड़े रहना फायदेमंद नहीं है।"[18] इसके अतिरिक्त यह उपन्यास पानी की समस्या, यूरिया की कालाबाजारी तथा गन्ना मील की समस्या पर भी प्रकाश डालता है।

प्रेमचंद की परम्परा को इक्कीसवीं सदी में संजीव ने आगे बढाया। किसान जीवन पर उनके उपन्यास 'फाँस' को काफी सराहा गया। इस उपन्यास में किसान आत्महत्या की एक शृंखला सी दिखाई पड़ती है। "यह उपन्यास व्यवस्था के नाम लिखा गया किसानों का एक सामूहिक सुसाइड नोट है।"[19] उपन्यास में उच्च वर्ग के अत्याचार, प्रशासन की उदासीनता, सरकार की बेरुखी, बहुराष्ट्रीय कंपनियों से उजड़ते ग्रामीण उद्योग और प्रकृति की मार के बाद किसान के पास कर्ज लेने के अलावा और कोई मार्ग शेष नहीं रहता। इस संदर्भ में शकुन का यह कथन सत्य ही है कि "इस देश में किसान कर्ज में ही जन्म लेता है, कर्ज में ही जीता है और कर्ज में ही मर जाता है।"[20] एक बार कर्ज लेने के बाद आत्महत्या के अलावा कोई मार्ग नहीं रहता। इसी का विस्तार से वर्णन संजीव ने इस उपन्यास में किया है।

निष्कर्ष :

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिंदी उपन्यास परम्परा में किसान जीवन की अलग–अलग अवस्थाएँ रही हैं। जिसमें आज़ादी के पहले का किसान संगठित होकर अंग्रेजों की किसान विरोधी नीतियों के विरुद्ध आन्लोदन करता है और राष्ट्रीय आंदोलनों में भी भाग लेता है। प्रेमचंद ने अंग्रेजों और किसानों के संघर्ष की इसी पृष्ठभूमि का वर्णन अपने उपन्यासों में किया है।

स्वाधीनता के बाद के किसान जीवन का वर्णन आँचलिक उपन्यासों में मिलता है। इस दौर का किसान विभिन्न जातियों या वर्गों में बँटा–सा दिखाई देता है। इक्कीसवीं सदी में किसान जीवन से जुड़े उपन्यास लेखन की परम्परा हमें और अधिक विकसित दिखाई देती है। जहाँ इस सदी के आरम्भिक दो दशकों में किसान जीवन की प्रमुख समस्याएँ; जैसे– भूमि अधिग्रहण, बाजारवाद का प्रभाव, औद्योगीकरण का प्रभाव, भ्रष्ट सरकारी तंत्र, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का एकाधिकार, किसान आत्महत्या, प्राकृतिक आपदाएँ, बड़े किसान या जमींदारों का शोषण आदि विषयों से जुड़े एक दर्जन से अधिक उपन्यास लिखे गए।

संदर्भ –

1. हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 229
2. डॉ. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ.177
3. नामवर सिंह, प्रेमचंद और भारतीय समाज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ.19
4. डॉ. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 75
5. वही, पृ. 84
6. वही, पृ. 97
7. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृ. 481
8. गोपाल राय, हिंदी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ.217
9. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृ. 482
10. वही, पृ. 487
11. अरुण प्रकाश, उपन्यास के रंग, अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, 2016, पृ. 217
12. पुष्पपाल सिंह, 21वीं शती का हिंदी उपन्यास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ.234
13. एस.आर. हरनोट, हिडिम्ब, आधार प्रकाशन, पंचकुला, 2011, पृ. 22
14. राजू शर्मा, हलफनामें, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृ. 45
15. शिवमूर्ति, आख़िरी छलांग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 83
16. सुनील चतुर्वेदी, कालीचाट, अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, 2015 पृ. 10
17. पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, शिवना प्रकाशन, सीहोर, 2022, पृ. 9
18. मिथिलेश्वर, तेरा कोई संगी नहीं, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2018, पृ. 26
19. प्रो.संजय नवले (संपादक), उपन्यासकार संजीव (किसान आत्महत्या–फाँस उपन्यास का संदर्भ), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृ. 51
20. संजीव, फाँस, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ. 15